"अथर्ववेद में गृहोपकरण : एक विवेचन"

डॉ. अर्चना भार्गव
सह–आचार्य, संस्कृत–विभाग,
सम्राट पृथ्वीराज चौहान
राजकीय महाविद्यालय, अजमेर।
bhargavaarchana79@gmail.com

शोध–सारांश – वैदिक वाङ्मय में उल्लिखित गृह में नित्य उपयोग में आने वाली वस्तुओं को दो श्रेणियों – शयनासन तथा गृहापयोगी उपकरण – में विभक्त किया जा सकता है। इनमें शयनासन के लिए गृहोपस्कर शब्द का प्रयोग प्राप्त होता है जिनमें मुख्यतः तल्प, प्रोष्ठ, बह्य, आसन्दी, आसन आदि परिगणित हैं। गृहोपयोगी पात्रों में कुम्भ, कुम्भी, कलश, गर्गर, आमपात्र, नीलोहित पात्र, कंस, स्थाली आदि का बहुशः उल्लेख किया गया है। वस्तुतः गृह में विद्यमान होने तथा गृहस्थ के लिए सुविधाजनक इन उपकरणों को गृह–वास्तु के अन्तर्गत रखा जा सकता है।

बीज शब्द :– गृहोपस्करण, तल्प, प्रोष्ठ, हिण्डोले, कुम्भ, गर्गर, कंस, अमत्र आदि।

गृहस्य शोभा उपकरणैः सदा,
कार्यस्य सिद्धिः साधनैरपि।
सुखं च जीवने सम्पद्यते,
यदा भवन्ति साधनानि गृहे।।

वस्तुतः गृहस्थ जीवन की विविध क्रियायें गृह के बिना सम्भव नहीं हैं। गृह में सम्पादित की जाने वाली इन विभिन्न क्रियाओं के लिए गृहोकरणों की अनिवार्यता स्वयंसिद्ध है। इसीलिए वैदिक ऋषि कहते हैं कि हमारे गृहों में सैंकड़ों कक्ष हों तथा हजारों उपकरण। सम्पूर्ण वैदिक वाङ्मय में गृह में सम्पद्यमान विभिन्न नित्य–नैमित्तिक कर्मों के अनुष्ठान हेतु प्रयोग में आने वाली विभिन्न प्रकार की उपयोगी वस्तुओं का उल्लेख प्रप्त होता है। इन वस्तुओं के उपयोग से तत्कालीन समाज की प्रोन्नत भौतिक स्थिति का परिचय प्राप्त होता है। अथर्ववेद में बहुलता से प्राप्त इन गृहोपयोगी उपकरणों को दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है –

(1) शयनासन अथवा गृहोपस्करण।

(2) गृहोपयोगी पात्र।

(1) शयनासन –

अथर्ववेद में शयनासन के लिए गृहोपस्करण शब्द का प्रयोग भी दृष्टिगत होता है। शयनासन के अन्तर्गत बैठने तथा सोने के लिए उपयोगी वस्तुओं की गणना की जाती है। इसमें आसन्दी, शय्या, आसन आदि आते हैं जिन पर निम्नरूपेण प्रकाश डाला जा रहा है–

(क) तल्प, प्रोष्ठ तथा वह्य (शयनासन)

वैदिक वाङ्मय में तीन प्रकार के शयन–आसनों का उल्लेख प्राप्त होता है – तल्प, प्रोष्ठ तथा वह्य। ये तीनों प्रकार की शय्याएँ वैदिक काल में अन्तःपुर में स्त्रियों के शयन अथवा उठने–बैठने के लिए प्रयुक्त होती थीं। ये तीनों शय्याएँ अपनी रचना एवं सजावट के कारण परस्पर भिन्न–भिन्न थीं। यथा –

1. **तल्प** – यह साधरण शय्या न होकर बहुमूल्य पलंग था जिस पर वर–वधू नव–समागम के शुभ अवसर पर शयन करते थे। यह पवित्र उदुम्बर–वृक्ष की काष्ठ से निर्मित होती थी। वस्तुतः यह वैवाहिक–शय्या थी जिस पर आरोहण का अधिकार वर–वधू को ही थी।
2. **प्रोष्ठ** – यह काष्ठ–निर्मित, बड़ा ऊँचा, बेंच जैसा शयनासन होता था। इसके सुडौल बने दो पैर होते थे तथा सम्भवतः दीवार का सहारा लेकर इसे खड़ा किया जाता था।
3. **वह्य** – यह स्त्रियों के लिए उपयोगी सुखद आसन था। 'वह्य' शब्द से ही ज्ञात होता है कि इसका उपयोग एक स्थान से दूसरे स्थान पर स्त्रियों को लाने–ले जाने के लिए किया जाता था। सम्भवतः यह पालकी, हिण्डोले अथवा झूले जैसे होता था। यह भी काष्ठ–निर्मित होता था। इस पर विभिन्न प्रकार की रमणीय आकृतियाँ उकेरी जाती थीं तथा शोभन चादर बिछायी जाती थी।

अथर्ववेद तथा ऋग्वेद में इन शय्याओं के प्रयोग विषयक अनेक मन्त्र प्राप्त होते हैं। ऋग्वेद के एक मन्त्र में इन त्रिविध शय्याओं का उल्लेख किया गया है –

प्रोष्ठेशया वह्यशया नारीर्यास्तल्पशीवरीः।
स्त्रियो याः पुण्यगन्धास्ताः सर्वाः स्वापयामसि।।[1]

इसी प्रकार का वर्णन अथर्ववेद के मन्त्रों में भी प्राप्त होता है –

प्रोष्ठे शयास्तल्पेशयाः नारीर्या वह्यशीवरीः।
स्त्रियो या पुण्यगन्धयस्ताः सर्वाः स्वापयामसि।।[2]

इस मन्त्र में त्रिविध शय्याओं पर शयन करने वाली स्त्रियों का निदर्शन होता है –

(1) प्रोष्ठे शया = प्रोष्ठ अर्थात् मञ्चकों पर सोने वाली स्त्रियाँ।

(2) तल्पे शया = तल्प अर्थात् खाट पर सोने वाली स्त्रियाँ।

(3) वह्य शीवरी = वह्य अर्थात् हिण्डोले आदि पर सोने वाली स्त्रियाँ।

अथर्ववेद के एक अन्य मन्त्र में उल्लिखित है –

नास्य जाया शतवाही कल्याणी तल्पमा शये।

यस्मिन् राष्ट्रे निरुध्यते ब्रह्मजायाचित्त्या।।[3]

अथर्ववेद के 'विवाह–सूक्त' में कहा गया है कि शोभन मन वाली सदाचारिणी स्त्री पति के लिए सन्तानोत्पत्ति की कामना से तल्प (पलंग) पर शयन करे। यथा –

आ रोह तल्पं सुमनस्यमानेह प्रजां जनय पत्ये अस्मै।

इन्द्राणीव सुबुधा बुध्यमाना ज्योतिरग्रा उषसः प्रति जागरासि।।[4]

मन के उत्तम भावों को धारण करती हुई स्त्री पलंग (तल्प) पर आरोहण करे। यहाँ इस पति के लिए सन्तान उत्पन्न करे। इन्द्राणी के समान उत्तम ज्ञानवाली होकर, जिसके बाद सूर्य की ज्योति आने वाली है, ऐसी उषाओं के पूर्व जागकर निद्रा छोड़कर उठे। अर्थात् यह स्त्री मन के उत्तम भाव धारण करती हुई पलंग पर पति के लिए उत्तम संतानोत्पत्ति हेतु आरोहण करे। उत्तम ज्ञान सम्पादन कर उषःकाल के पूर्व जागकर निद्रा से निवृत्त हो उठे।

अथर्ववेद में 'तल्प' (पलंग) की महिमा तथा उसकी उपादेयता पर भी प्रकाश गया है।[5]

(ख) आसन्दी

आसन्दी का अर्थ है कुर्सी अथवा चौकी। इनका निर्माण बढ़ई (तक्षा) द्वारा किया जाता था। ये प्रायः काष्ठ तथा रस्सी अथवा बेंत की बनी होती थीं। अथर्ववेद में अनेक स्थलों पर इनका उल्लेख दृष्टिगत होता है। यथा –

यदासन्द्यामुपधाने यद्वोपवासने कृतम्।

विवाहे कृत्यां यां चक्रुरास्नाने तां निदध्मसि।।[6]

अथर्ववेद में व्रात्यों के लिए बड़ी कुर्सी (आसन्दी) लाने का वर्णन है। व्रती वर्ष भर तक खड़ा रहा। उसे देवों ने कहा – हे व्रती! तू क्यों खड़ा है? तब व्रती ने कहा – मेरे लिए बैठने हेतु कुर्सी (आसन्दीम्) लाओ। तब व्रती के लिए बैठने की कुर्सी लायी गयी। यथा –

सोऽब्रवीदसन्दीं मे सं भरन्त्विति।।[7]

तस्मै व्रात्यायासन्दीं समभरन्।[8]

व्रात्य के बैठने के लिए जो आसन्दी (कुर्सी) लायी गयी, उसकी बनावट का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि –

"तस्याः ग्रीष्मः च वसन्तश्च द्वौ पादावास्तां शरच्च वर्षाश्च द्वौ।।"[9]

वस्तुतः आसन्दी (कुर्सी) के चार पैर होते थे। इसमें दो आगे के पैर तथा दो पीछे के पैर होते थे। ग्रीष्म तथा वसन्त ये उस कुर्सी के दो पैर थे तथा शरद् और वर्षा उस कुर्सी के दो पैर थे। अर्थात् आसन्दी के चार पैर ग्रीष्म, वसन्त, शरद् तथा वर्षा ये चार ऋतुएँ थीं।

बृहच्च रथन्तरं चानूच्ये ३ आस्तां यज्ञायज्ञियं च वामदेव्यं च तिरश्च्ये।।[10]

बृहत् तथा रथन्तर ये उस आसन्दी के दो बाजू–फलक थे तथा यज्ञायज्ञिय और वामदेव्य ये दो उस आसन्दी के तिरछे फलक थे।

ऋचः प्राञ्चस्तन्तवो यजूंषि तिर्यञ्चः।।[11]

उस आसन्दी के लम्बाई के तन्तु ऋग्वेद की ऋचाओं को माना गया तथा तिरछे तन्तु यजुर्वेद के यजुषों को माना गया। अर्थात् आसन्दी की बुनाई रस्सी या बेंत से सीधी तथा तिरछी होती थी।

वेद आस्तरणं ब्रह्मोपबर्हणम्।[12]

उस आसन्दी का बिछोना वेद को कहा गया तथा ब्रह्म अर्थात् ज्ञान उसका ओढ़ने का वस्त्र था।

सामासाद उद्गीथोपश्रयः।[13]

साम उसका गद्दा था तथा उद्गीथ उसका तकिया था।

तामासन्दीं व्रात्य आरोहत्।।[14]

उस उपर्युक्त स्वरूप वाली ज्ञानमयी आसन्दी पर व्रती बैठा। यह आसन्दी ज्ञानरूप थी।

(ग) **शयन**

अथर्ववेद में 'शयन' शब्द का प्रयोग 'शय्या' अर्थ में अनेक स्थलों पर प्राप्त होता है। यथा –

अपां मा पाने यतमो ददम्भ क्रव्याद्यातूनां शयने शयानम्।
तदात्मना प्रजया पिशाचा वि यातयन्तामगदो ३ यमस्तु।।[15]

उपर्युक्त मन्त्र में 'शयने शयानम्' का अर्थ है "शय्या पर सोते हुए"।

इसी प्रकार एक अन्य मन्त्र में भी 'शयन' शब्द का प्रयोग 'शय्या' अर्थ में प्राप्त होता है।[16]

अथर्ववेद में एक अन्य मन्त्र में कहा गया है –

दिवा मा नक्तं यतमो ददम्भ क्रव्याद्यातूनां शयने शयानम्।
तदात्मना प्रजया पिशाचा वि यातयन्तामगदो ३ यमस्तु।।[17]

अन्यच्च –

असंयदेतन्मनसो हृदो मे भ्राता स्वसुः शयने यच्छयीय।[18]

यहाँ भी 'शयने' का अर्थ 'शय्या' ही है।

(घ) आसन

अथर्ववेद में कहा गया है कि आसन का उपयोग बैठने के लिए होता था। राजसिंहासन के लिए भी 'आसन' शब्द का प्रयोग किया गया है। यथा –

परिच्छिन्नः क्षेममकरोत्तम् आसनमाचरन्।

कुलायन्कृण्वन्कौरव्यः पतिर्वदति जायया।।[19]

इस मन्त्र में 'आसन' शब्द का प्रयोग 'राजसिंहासन' के लिए किया गया है।

अर्थात् परिक्षित ने उत्तम राजसिंहासन (आसनम्) पर विराजमान होते हुए हमारा कल्याण किया। अपना घर बनाता हुआ कौरव–पुत्र पति अपनी भार्या से कहता है।

(2) गृहोपयोगी पात्र –

अथर्ववेद में नाना प्रकार की वस्तुओं को रखने तथा पकाने हेतु विभिन्न प्रकार के धातु, पाषाण, लकड़ी एवं मिट्टी के बने पात्रों का बहुलता से उल्लेख प्राप्त होता है। इन पात्रों में गृहस्थ के घरेलू दैनिक उपयोग के बर्तन एवं यज्ञीय–पात्रों का समावेश होता है। यज्ञीय–पात्रों का विवेचन 'यज्ञशाला वास्तु' अध्याय में द्रष्टव्य है। इस अध्याय में गृहोपयोगी सामान्य पात्रों का ही वर्णन किया जा रहा हैं –

(क) कुम्भ

अथर्ववेद में अनेक स्थलों पर 'कुम्भ' का उल्लेख मिलता है। कुम्भ से अभिप्राय मिट्टी के घड़े से है। मुख्यतः यह पानी रखने के काम आता था। इस कुम्भ में दूध, दही, घृत आदि भी रखा जाता था। इसका निर्माण कुम्हार द्वारा किया जाता था।

अथर्ववेद में 'शाला–निर्माण' सूक्त में कहा गया है कि इस शोभन शाला में शहद के मीठे रस से परिपूर्ण घड़े (कुम्भ) तथा दही से भरे हुए कलश प्रचुर मात्रा में रखे जायें। अतिथि–सत्कार हेतु इनका उपयोग किया जाये। यथा –

एमां कुमारस्तरुण आ वत्सो जगता सह।

एमां परिस्रुतः कुम्भ आ दध्नः कलशैरगुः।।[20]

इसी सूक्त में कहा गया है कि गृह–प्रवेश–संस्कार के समय स्त्री इस पूरे भरे हुए जल के घड़े (कुम्भम्) का तथा अमृत से युक्त घी की धारा को अर्थात् घृत के कलश को भली प्रकार से भर कर लायें तथा अभ्यागतों को प्रचुर–मात्रा में पिलायें। यही इष्ट तथा पूर्त कर्म शाला की रक्षा करते हैं। यथा –

पूर्णं नारि प्र भर कुम्भमेतं घृतस्य धाराममृतेन संभृताम्।

इमां पातृनमृतेना समङ्ग्धीष्टापूर्तमभि रक्षात्येनाम्।।[21]

स्त्रियाँ सदैव सुन्दर वस्त्राभूषणों से सुशोभित रहें। स्त्री का प्रथम कर्त्तव्य है– घर में पानी से भरे हुए घड़े रखना। वे घड़ा (कुम्भम्) ग्रहण करें और उसे उत्तम जल से भरकर शाला में रखें। वे उत्तम पति को प्राप्त करें, उत्तम सन्तति को उत्पन्न करें तथा सदैव गृह का सौन्दर्य बढ़ायें। यथोक्तम् –

एमा अगुर्योषितः शुम्भमाना उत्तिष्ठ नारि तवसं रभस्व।

सुपत्नी पत्या प्रजया प्रजावत्या त्वाऽऽगन् यज्ञः प्रति कुम्भं गृभाय।।[22]

उपुर्यक्त वर्णन से स्पष्ट होता है कि गृहस्थ के लिए कुम्भ का विशेष महत्त्व है। गृह में जल से भरे हुए कुम्भ को रखना वास्तुसम्मत एवं गृह की समृद्धि का द्योतक है।

(ख) कुम्भी –

मिट्टी के छोटे घड़े को कुम्भी कहा जाता था। इसको ढकने के लिए मिट्टी का ही ढक्कन (अपिधान) होता था। अथर्ववेद में कहा गया है –

इयमेव पृथिवी कुम्भी भवति राध्यमानस्यौदनस्य द्यौरपिधानम्।[23]

अर्थात् पकाये जाने वाले चावलों की यह पृथिवी मानो कुम्भी (डेगची) है तथा द्युलोक इसका ढक्कन है।

अभिप्राय यह है कि कुम्भी का प्रयोग चावल आदि पदार्थ पकाने के लिए होता था।

एक अन्य मन्त्र में भी 'कुम्भी' का उल्लेख प्राप्त होता है –

ऋचा कुम्भ्यधिहितार्त्विज्येन प्रेषिता।[24]

(ग) कलश

यह धातुनिर्मित घड़ा होता था। अथर्ववेद में कलश में सोमरस रखने का कथन अनेक बार किया गया है। यथा –

"सोमेन पूर्णं कलशं बिभर्षि त्वष्टा रूपाणां जनिता पशूनाम्।"[25]

अर्थात् यह ऋषभ सोमरस से परिपूर्ण कलश को धारण करने वाला तथा विभिन्न रूपों को बनाने वाला एवं पशुओं को उत्पन्न करने वाला है।

इसी प्रकार एक अन्य मन्त्र में भी बैल को सोम के कलश को धारण करने वाला कहा गया है – **'सोमस्य कलशः धृतः।'**[26]

इन कलशों में 'दधि' आदि रखने का उल्लेख भी प्राप्त होता है। यथा –

"एमां परिस्रुतः कुम्भ आ दध्नः कलशैरगुः।"[27]

अर्थात् इस शाला में छलकते हुए मधु से परिपूर्ण कुम्भ तथा दही से भरे हुए कलशों के साथ प्रवेश करें।

(घ) गर्गर –

यह मिट्टी अथवा धातु से निर्मित घड़ा होता था। कालान्तर में इसे गगरा, गगरी, गागर आदि नामों से व्यवहृत किया जाने लगा। अथर्ववेद में इसका उल्लेख करते हुए कहा गया है – **"अपां गर्गराः श्वसन्तु"**[28] इत्यादि।

(ङ) आमपात्र तथा नीललोहित पात्र

अथर्ववेद में मिट्टी से निर्मित कच्चे पात्रों तथा पके पात्रों का वर्णन प्राप्त होता है।

जो बर्तन आवे (अग्नि) में नहीं पकाये जाते थे, वे कच्चे होते थे तथा इन मिट्टी के कच्चे बर्तनों को **'आमपात्र'** कहा गया है।

जो बर्तन आवे (अग्नि) में पकाये जाते थे, उन पके हुए मिट्टी के बर्तनों को पकाने के कारण नीले–लाल हो जाने से **'नीललोहित पात्र'** कहा गया है।

अथर्ववेद में इनका स्पष्ट उल्लेख प्राप्त होता है। यथा –

यां ते चक्रुरामे पात्रे यां चक्रुर्नीललोहिते।
आमे मांसे कृत्यां यां चक्रुस्तया कृत्याकृतो जहि।।[29]

अर्थात् जिस हिंसक प्रयोग को तेरे लिए कच्चे मिट्टी के पात्र में (आमे पात्रे) करते हैं तथा जिसे नीला व लाल होने तक पकाये गये मिट्टी के पक्के बर्तनों में (नीललोहिते पात्रे) करते हैं तथा कच्चे माँस में जिस हिंसक प्रयोग (कृत्याम्) को करते हैं, उससे उन हिंसा करने वालों का ही नाश करो। यह प्रार्थना अपामार्ग औषधि से की जा रही है।

(च) अमत्र (कुण्डी)

पाषाण अथवा लकड़ी की बनी हुई कुण्डी (कूँडी) को 'अमत्र' कहा जाता था। यह कटोरे के रूप में उपयोग में ली जाती थी। अथर्ववेद में इसका प्रयोग प्राप्त होता है –

"आ मध्वो अस्मा असिचन्नमत्रमिन्द्राय पूर्णं स हि सत्यराधाः।"[30]

अर्थात् मधु से परिपूर्ण पात्र (अमत्रम्) इस इन्द्र के लिए भरकर रखा है। वही सच्चा दानी है।

(छ) कंस

यह गिलास अथवा बाल्टी के आकार का बर्तन होता थ। इसमें दुग्ध–दोहन किया जाता था। अथर्ववेद में 'वशा गौ' प्रकरण में इस 'कंस' पात्र का उल्लेख किया गया है। यथा –

"शतं कंसाः शतं दोग्धारः शतं गोप्तारो अधि पृष्ठे अस्याः।"[31]

अर्थात् इस वशा गौ की रक्षा हेतु इसके साथ सौ दुग्ध–दोहनकर्त्ता, सौ कंसा पात्रों को लेकर, सौ रक्षकों के साथ चलते हैं। यहाँ स्पष्टतः 'कंसा' का अर्थ है – दुग्ध–दोहन–पात्र (बाल्टी)।

(ज) स्थाली

अथर्ववेद में पतीली अथवा बटलोई के लिए 'स्थाली' शब्द का प्रयोग किया गया है। यज्ञ के अवसर पर हविष्य पकाने हेतु 'उखा' पात्र काम में आता था तथा घरेलू अवसरों पर ओदन आदि पकाने हेतु 'स्थाली' पात्र काम में लिया जाता था। इस पात्र का उल्लेख अथर्ववेद में प्राप्त होता है –

"पदा प्र विध्य पाष्ण्यां स्थालीं गौरिव स्पन्दना।"[32]

उछलने वाली गाय जिस प्रकार लात मारकर स्थाली रूप दुग्ध–पात्र को ढकेलती है।

इसमें पकायी गयी 'खीर' को 'स्थालीपाक' कहा जाता था। यथा –

इहेत्था प्रागपागुदगधरागासन्ना उदभिर्यथा।

स्थालीपाको विलीयते। अश्वत्थपलाशम्।[33]

वस्तुतः स्थाली शब्द का ही अपभ्रंश हिन्दी का 'थाली' शब्द है किन्तु इसमें अर्थ–परिवर्तन भी हो गया है।

(झ) अंसद्री

इसे अंसध्री भी कहा गया है। यह पात्र पतीली अथवा भगोने के आकार का होता था। इसमें चावल पकाया जाता था। यह धातुनिर्मित पात्र था। अथर्ववेद में स्पष्टतः उल्लिखित है कि –

ऋतेन त्वष्टा मनसा हितैषा ब्रह्मौदनस्य विहिता वेदिरग्रे।

अंसद्रीं शुद्धमुप धेहि नारि तत्रौदनं सादय देवानाम्।।[34]

अर्थात् सत्य से निर्मित, मन से सुरक्षित यह ज्ञान बढ़ाने वाले अन्न की वेदी आगे बनायी है। हे नारि! शुद्ध अंसद्री (पतीली) को ऊपर रख और वहाँ देवताओं का अन्न तैयार कर। अर्थात् शुद्ध (माँजकर साफ किये गये) अंसद्री पात्र में यह अन्न रख दो तथा देवताओं को अर्पण करो।

एवंविध, अथर्ववेद में वर्णित उपर्युक्त गृहोपयोगी उपकरण वेदकालीन समाज में भी गृहस्थ जीवन की पूर्णता हेतु भौतिक साधनों के महत्त्व को निरूपित करते हैं। आधुनिक युग में तो इनका विकसित एवं विकृत स्वरूप जीवननिर्वाह हेतु अभिन्न अङ्ग बन गया है। गृह–निर्माण के समय आर्किटेक्ट के द्वारा गृह–कक्षों की रूपरेखा के साथ–साथ इन उपकरणों की स्थिति का भी स्पष्ट चित्रण किया जाता है। गृहस्थ द्वारा अपने भवन–निर्माण विषयक बजट का एक बड़ा भाग इन उपकरणों के लिए रखा जाता है। इसीलिए अर्वाचीन ग्रन्थों में कहा गया है –

"उपकरणैर्युक्तं गृहम् एव शोभते,

न तु रिक्तं वसुधामण्डलं यथा।।"

सन्दर्भ–ग्रन्थ :–

1. ऋग्वेद 7.55.8.
2. अथर्ववेद 4.5.3.
3. वही 5.17.12.
4. वही 14.2.31.
5. वही 12.2.49.
6. वही 14.2.65.
7. वही 15.3.2.
8. वही 15.3.3.
9. वही 15.3.4.
10. वही 15.3.5.
11. वही 15.3.6.
12. वही 15.3.7.
13. वही 15.3.8.
14. वही 15.3.9.
15. वही 5.29.8.
16. वही 3.25.1.
17. वही 5.29.9.
18. वही 18.1.14.
19. वही 20.127.8.
20. वही 3.12.7.
21. वही 3.12.8.
22. वही 11.2.14.

23. वही 11.3.11.

24. वही 11.3.14.

25. वही 9.4.6.

26. वही 9.4.15.

27. वही 3.12.7.

28. वही 4.15.12.

29. वही 4.17.4.

30. वही 20.76.7.

31. वही 10.10.5.

32. वही 8.6.17.

33. वही 20.134.3.

34. वही 11.1.23.